28

भारतीय कानून प्रणाली तथा उपेक्षित एवं अलाभान्वित समूह के लिए इसकी सार्थकता

** बरनार्ड डी सामी,*

प्रस्तावना

विद्यार्थियों को भारतीय कानून प्रणाली के बारे में ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य से अवगत कराया जाता है। इसमें उच्चतम न्यायालय के अधिकार और कार्य प्रणाली से आरंभ होकर स्थानीय कानूनों तक के बारे में वर्णन किया गया है ताकि लोकतांत्रिक संघ व्यवस्था में न्यायपालिका की कार्य प्रणाली के बारे में बताया जा सके। विभिन्न न्यायालयों के अधिकारों का वितरण इस प्रकार किया गया है कि देश में प्रत्येक नागरिक की न्याय प्रणाली तक पहुँच हो सके। न्यायिक कार्य प्रणाली की आलोचना की जाती है कि यह धनी वर्ग के पक्ष में है लेकिन निःशुल्क कानूनी सहायता प्रणाली के द्वारा इस धारणा का खंडन किया जा चुका है। नई अदालतें जैसे परिवार अदालत, प्रशासनिक ट्रिब्यूनल, उपभोक्ता अदालतें तथा लोक अदालत जैसी नई प्रकार की अदालतों की स्थापना की गई है। संघ-राज्य विधान मंडलों ने महिलाओं, बच्चों, दलितों, आदिवासियों और जनजातियों जैसे सुभेद्य व समूहों की सुरक्षा के लिए विभिन्न कानून पारित किए हैं। इस अध्याय में हम देश में उपेक्षित और अलाभान्वित समूहों की सुरक्षा करने वाली कानून प्रणाली के बारे में जानने का प्रयास करेंगे।

भारतीय न्यायपालिका और विभिन्न न्यायालयों की संरचना

भारतीय कानून प्रणाली का ऐतिहासिक विकास

पीछे 1773 में विनिमय अधिनियम के अंतर्गत गवर्नर जनरल (राज्यपाल) की परिषद् में एक कानूनी सदस्य का प्रावधान था। भारत सरकार अधिनियम 1935 में मूल और अपीलीय संघीय अदालत की स्थापना का प्रावधान था। 1950 में भारतीय संविधान ने सर्वोच्च कानूनी संस्था के रूप में उच्चतम न्यायालय से लेकर पंचायत स्तर तक के न्यायालय की विस्तृत कानून प्रणाली की संरचना का प्रावधान किया है।

** डॉ. बरनार्ड डी सामी, लोयोला कालेज, चेन्नई*

भारतीय न्यायपालिका प्रणाली की संरचना और अपील की विभिन्न अदालतें

हमारे संविधान के अंतर्गत देश में संघ तथा राज्यों के लिए सर्वोच्च अदालत के रूप में उच्चतम न्यायालय सहित अदालतों की क्रमिक एकीकृत न्याय प्रणाली है। हमारे पास राज्यों में क्रमशः उच्च अदालतें और अधीनस्थ अदालत हैं। उच्च अदालतों तथा किसी कानून के अंतर्गत गठित अदालतों के अतिरिक्त प्रत्येक जिले में जिला और सत्र न्यायाधीश अदालतें तथा महानगरों में महानगर न्यायाधीश हैं। विभिन्न राज्यों में अधीनस्थ न्यायालयों की व्यवस्था भिन्न-भिन्न हो सकती है लेकिन न्यायपालिका की आवश्यक प्रकृति वही है जो निम्नलिखित चार्ट में दर्शाई गई हैं:

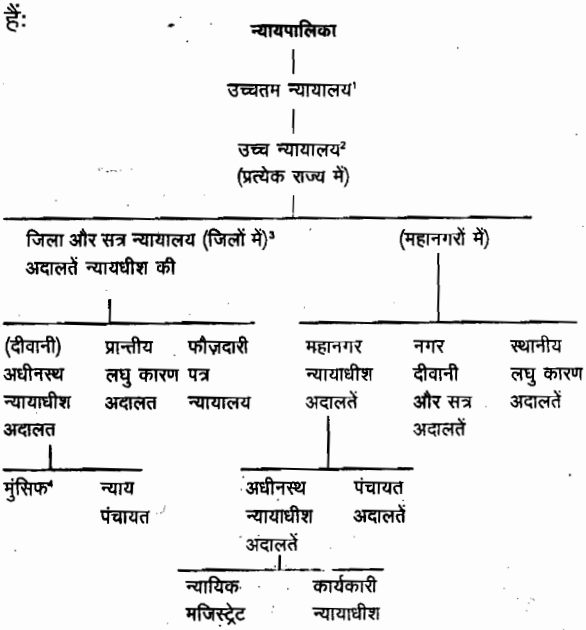

निम्नतम स्तर पर न्याय की दो शाखाएँ दीवानी और फौजदारी अदालतें अलग-अलग की गई। ग्राम स्व-शासन अधिनियम (Village Self-Government Act) के अंतर्गत गठित संघ न्यायालय और बैंच न्यायालय जिसने निम्नतमः क्रमशः दीवानी और फौजदारी अदालतों की रचना की थीं इन्हें परवर्ती संविधान राज्य कानूनों के अंतर्गत पंचायत अदालतों की संरचना में परिवर्तित किया गया। दीवानी और फौजदारी दो स्तरों पर कार्यरत् पंचायत अदालतों के विभिन्न क्षेत्रीय नाम हैं जैसे न्याय पंचायत, पंचायत अदालतें, ग्राम कचहरी आदि। कुछ राज्यों

में पंचायत अदालतें छोटे-मौटे मामलों में निम्नतम न्याय की फौजदारी अदालतें हैं। अगली उच्च फौजदारी अदालत मुंसिफ अदालतें हैं जिन्हें 1,000/- रुपये तक के तथा कुछ विशेष मामलों में 5,000/- रुपये तक के दावों के न्याय के लिए अधिकृत किया गया है। मुंसिफ अदालतों से ऊपर अधीनस्थ न्यायाधीश होते हैं जिन्हें दीवानी मुकदमों पर असीमित न्यायिक अधिकार होते हैं। और वे मुंसिफों के निर्णयों के विरुद्ध अपील की सुनवाई करते हैं। जिला न्यायाधीश अधीनस्थ न्यायाधीशों और मुंसिफों के निर्णय के विरुद्ध प्रथम अपील सुनते हैं और दीवानी तथा फौजदारी मामलों में मूल न्यायिक असीमित अधिकार रखते हैं। स्थानीय लघु कारण अदालत छोटी राशि के मुकदमों की सुनवाई करती है।

जिला न्यायाधीश उच्च अदालतों की सलाह से राज्यपाल द्वारा नियुक्त किए जाते हैं। जो व्यक्ति पहले से सरकारी सेवा में नहीं हैं तथा जिसे वकालत का कम से कम सात वर्ष का अनुभव है जिला न्यायाधीश बनने का पात्र बन जाता है। अनुच्छेद 233 उपर्युक्त शर्तों के साथ जिला न्यायाधीश की नियुक्ति को विनिर्दिष्ट करता है जबकि अनुच्छेद 234 स्पष्ट रूप से वर्णन करता है कि राज्य की न्यायिक सेवाओं में जिला न्यायाधीश से भिन्न व्यक्तियों की नियुक्ति राज्य लोक सेवा आयोग (State Public Service Commission – SPSC) की सलाह से निर्मित नियमों के अनुसार राज्यपाल के द्वारा की जाती है। राज्य लोक सेवा आयोग के अतिरिक्त ऐसी नियुक्ति में उच्च न्यायालय से भी परामर्श किया जाता है।

जिला न्यायाधीश जिले में दीवानी और फौज़दारी दो प्रकार के मामलों में उच्चतम न्यायिक अधिकारी होता है जो वरिष्ठ न्यायाधीशों के निर्णयों के विरुद्ध अपील सुनता है और सत्र मामलों के रूप में गंभीर फौजदारी मामलों की सुनवाई भी करते हैं। कभी-कभी किसी अधीनस्थ न्यायाधीश को सहायक सत्र न्यायाधीश के अधिकार भी प्रदान किए जाते हैं ऐसे मामले में उसके पास जिला न्यायाधीश की तरह दीवानी और फौज़दारी अधिकार हो जाते हैं। उच्चतम न्यायालय की तरह प्रत्येक उच्च न्यायालय भी इसकी अवमानना के लिए दंडित करने के अधिकार सहित (अनुच्छेद 215) ऐसी अदालतों के अपने अधिकारों सहित रिकार्ड, मूल और अपीलीय न्यायिक अधिकार न्यायालय भी हैं। मुख्य न्यायाधीशों और स्वयं उच्च न्यायालय के मूल कार्यों से ऊपर अपीलीय न्यायिक अधिकारों का प्रयोग करती हैं। मणिपुर, मेघालय, त्रिपुरा और नागालैंड को छोड़कर प्रत्येक राज्य का अपना अलग-अलग न्यायालय होता है। ये राज्य एक सामान्य उच्च न्यायालय के रूप में असम के उच्च न्यायालय का उपयोग करते हैं तथा हरियाणा, पंजाब और

चंडीगढ़ का एक ही उच्च न्यायालय है। बम्बई उच्च न्यायालय महाराष्ट्र और गोवा का एक ही उच्च न्यायालय है। उच्चतम न्यायालय उच्च न्यायालयों के ऊपर अपीलीय न्यायालय है तथा देश का उच्चतम न्यायालय है। उच्चतम न्यायालय के मूल एवं सलाहकारी न्यायिक अधिकार कार्य होते हैं।

अपील के अन्य न्यायालय

संविधान की संरचना के अंतर्गत स्थापित न्यायालयों के अतिरिक्त लोगों की आवश्यकता व हितों तथा समय की आवश्यकता का ध्यान रखते हुए निम्नलिखित अदालतों की संरचना भी की गई है:

क) **प्रशासनिक अधिकरण (ट्रिब्यूनल)**

संसद ने 1985 में प्रशासनिक अधिकरण (ट्रिब्यूनल) अधिनियम लागू किया। इसके माध्यम से सेवा मामलों में केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों को शीघ्र व बहुमूल्य न्याय प्रदान करने के लिए नवम्बर, 1985 में केन्द्रीय प्रशासनिक अधिकरण (ट्रिब्यूनल) - कैट (Central Administrative Tribunal – CAT) की स्थापना की गई। कैट के अतिरिक्त अन्य अनेक ट्रिब्यूनल भी हैं जैसे – औद्योगिक ट्रिब्यूनल, वाहन दुर्घटना दावा ट्रिब्यूनल, वाणिज्यिक ट्रिब्यूनल, सहकारी संस्थात्मक ट्रिब्यूनल तथा वाणिज्यिक कर ट्रिब्यूनल आदि।

परिवार अदालत अधिनियम, 1984 (Family Court Act) का उद्देश्य विवाह और पारिवारिक मामलों से संबंधित मतभेदों को शीघ्र सुलझाने और समझौतों को बढ़ावा देना था। ये अदालतें 10 लाख से अधिक की आबादी वाले शहर या नगर में तथा सरकार द्वारा आवश्यक समझे जाने वाले मामलों में स्थापित की जाती है।

ख) **विशेष अदालतें**

ये विशेष अदालतें निश्चित उद्देश्यों जैसे स्वापक (narcotic) और ड्रग्स संबंधी मामलों से संबंधित एन.डी.पी.एस. अधिनियम, श्रम और औद्योगिक विषयों से संबंधित मामलों के लिए श्रम अदालतें, भ्रष्टाचार संबंधित मामलों या सी.बी.आई मामलों के लिए विशेष अदालतें या अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर अत्याचार के लिए बनाई गई हैं। कानूनी मामलों को शीघ्र एवं तेज़ी से निपटाने के लिए कुछ राज्यों में हाल ही में शीघ्र कार्य निपटान (फास्ट ट्रैक) अदालतें स्थापित की गई हैं।

निःशुल्क कानूनी सहायताः सेवानिवृत न्यायाधीश पी. एन. भगवती की अध्यक्षता में एक उच्च अधिकार संपन्न समिति ने सितम्बर 1980 में राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों द्वारा अपनाए जाने के लिए मुफ्त (निःशुल्क) कानूनी सहायता की एक आदर्श योजना प्रस्तुत की। इस योजना के अनुसार सभी स्रोतों से एक निश्चित आमदनी से अनधिक प्राप्त करने वाला प्रत्येक व्यक्ति मुफ्त कानूनी सहायता प्राप्त करने का पात्र है। आमदनी की सीमा मतभेदों के उस मामलों में लागू नहीं है जहाँ एक पक्ष अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति, खानाबदोश, महिला या बच्चों से संबंधित हैं।

लोक अदालतें : लोक अदालतें वर्तमान स्वैच्छिक एजेंसियाँ हैं। राज्य कानूनी सहायता और सलाहकार बोर्डों द्वारा इनकी भागीदारी की जाती है तथा इन पर नज़र रखी जाती है। यह समझौतावादी पद्धतियों से मतभेदों को सुलझाने का सफल वैकल्पिक न्यायालय सिद्ध हुआ है। 1987 में कानूनी सेवा प्राधिकारण बनाया गया जिसने कानूनी सहायता आंदोलन को संवैधानिक आधार प्रदान किया है। इस अधिनियम के अंतर्गत लोक अदालतों को संवैधानिक अधिकार प्राप्त होगा। लोक अदालत का प्रत्येक निर्णय किसी दीवानी अदालत का निर्णय या किसी अन्य अदालत या ट्रिब्यूनल का आदेश माना जाएगा और मतभेदों से संबंधित सभी पक्षों के लिए अंतिम तथा बाध्यकारी होगा।

जनहित याचिकाः जनता का कोई भी व्यक्ति अब सहमत व्यक्ति विशेषतः जब व्यक्ति सुभेद्य हो और स्वयं न्यायालय जाने में असमर्थ हो की तरफ से संवैधानिक अधिकारों को लागू करने के लिए उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय में कार्यवाही आरंभ कर सकता है। जनहित याचिका के पीछे सिद्धान्त यह अनुच्छेद 32 में वर्णित सुने जाने के अधिकार का पालन करना। जहाँ तक जनहित मुकदमों का संबंध है बस्ती हटाने, बंधुआ मज़दूर, विचाराधीन मामले तथा प्रदूषण मामलों में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय काफी महत्वपूर्ण हैं।

उच्चतम न्यायालय – संरचना, अधिकार और कार्य

जैसा कि पहले चर्चा की गई है हमारे यहाँ संयुक्त राज्य अमेरिका की तरह क्रमशः या संघ और राज्यों के लिए अलग-अलग अदालतें नहीं है। भारतीय न्याय प्रणाली सुगठित एवं संघटित है। संपूर्ण गणतांत्रिक भारत के लिए एक ही एकीकृत न्याय प्रणाली है। संपूर्ण न्याय प्रणाली में उच्चतम न्यायालय सबसे बड़ी अदालत है। यह भारत के संविधान और विशेषतः मूल अधिकारों के संरक्षक के

रूप में कार्य करती है।

संरचनाः मूलतः उच्चतम न्यायालय में एक मुख्य न्यायाधीश तथा सात अन्य न्यायाधीश थे (अनुच्छेद 124)। इनकी संख्या में संसद द्वारा पारित अधिनियमों के द्वारा कई बार वृद्धि की गई है। 1986 में भारत के मुख्य न्यायाधीश तथा 25 से कम अन्य न्यायाधीश थे।

नियुक्तिः भारत के मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति राष्ट्रपति के द्वारा मंत्रिपरिषद की सलाह से आवश्यक समझे जाने पर उच्चतम न्यायालय तथा राज्य उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की सलाह से की जाती है। परम्परा के अनुसार उच्चतम न्यायालय के वरिष्ठतम न्यायाधीश को ही प्रायः मुख्य न्यायाधीश नियुक्त किया जाता है। राष्ट्रपति उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के साथ सलाह करके उच्चतम न्यायालय के अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति करता है। न्यायाधीश राष्ट्रपति के सामने या राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किसी अन्य व्यक्ति के सामने संविधान में निहित प्रारूप में अपने पद की शपथ लेता है। संविधान अपने अनुच्छेद 124 (6) और (7) के द्वारा उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश को भारत की किसी भी अदालत में वकालत कार्य करने से निषेध करता है।

योग्यताः उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त होने के लिए व्यक्ति (i) भारत का नागरिक होना चाहिए, (ii) वह उच्च न्यायालय का या ऐसे दो न्यायालयों का क्रमशः 5 वर्ष तक न्यायाधीश रहा हो, या (iii) उच्च न्यायालय में 10 वर्ष तक अधिवक्ता रहा हो या विशिष्ट विधिवेत्ता रहा हो। न्यायाधीश बनने के लिए कोई न्यूनतम आयु सीमा निर्धारित नहीं की गई है।

नियुक्ति की अवधि और पदच्युत करनाः उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश 65 वर्ष की आयु तक अपने पद पर नियुक्त रहता है। फिर भी, कोई भी राष्ट्रपति को इससे पूर्व अपना त्यागपत्र दे सकता है। किसी न्यायाधीश को दुर्व्यवहार या अक्षमता के आधार पर राष्ट्रपति के आदेश से हटाया जा सकता है लेकिन पद से हटाने के लिए संविधान में वर्णित नियमित प्रक्रिया का पालन करना आवश्यक है। यदि संसद के दोनों सदनों में सदस्यों का बहुमत तथा प्रत्येक सदन के उपस्थित तथा मतदान करने वाले कम से कम दो-तिहाई सदस्यों के बहुमत द्वारा न्यायाधीश को पद से हटाने की सिफारिश राष्ट्रपति को की जाती है। यह इस सामान्य धारणा के विपरीत है कि हमारे संविधान में न्यायाधीश के महाभियोग का प्रावधान नहीं है।

वेतन एवं विशेषाधिकारः न्यायाधीशों के वेतन और विशेषाधिकार निर्धारित करने का अधिकार संसद को दिया गया है। 1986 में 54वें संशोधन अधिनियम के द्वारा न्यायाधीशों के वेतन संशोधित किए गए। मुख्य न्यायाधीश को 33,000/- रुपये तथा उच्चतम न्यायालय के अन्य न्यायाधीशों को 30,000/- रुपये प्रति माह वेतन प्राप्त होता है। उन्हें अन्य विशेषाधिकार जैसे किराया मुक्त आवास, देश में यात्रा खर्च तथा पेंशन आदि भी मिलते हैं। न्यायाधीशों के वेतन एवं अन्य खर्चे भारत की समेकित निधि से वहन किए जाते हैं।

उच्चतम न्यायालय का स्थानः उच्चतम न्यायालय का स्थान दिल्ली में है लेकिन उच्चतम न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश राष्ट्रपति की पूर्व सहमति से दिल्ली के अतिरिक्त भारत में कहीं भी उच्चतम न्यायालय की स्थापना कर सकता है।

उच्चतम न्यायालय के अधिकार और कार्य

उच्चतम न्यायालय के अधिकार और अधिकारक्षेत्र काफी व्यापक हैं। उच्चतम न्यायालय के तीन प्रकार के क्षेत्राधिकार हैंः (i) मूल कार्य, (ii) अपीलीय कार्य और (iii) सलाह कार्य।

क) **मूल न्यायाधिकारः** मूल न्यायाधिकार का अर्थ है आरंभ में ही किसी विवाद का सुनना और उसका निर्णय करना। उच्चतम न्यायालय को निम्नलिखित मामलों में मूल न्यायाधिकार हैं (क) भारत सरकार तथा एक या अधिक राज्यों के बीच होने वाला विवाद, (ख) भारत सरकार और एक राज्य या कई राज्य तथा दूसरी तरफ एक या अनेक राज्यों के बीच वाद, (ग) दो या अधिक राज्यों के बीच वाद, (घ) मूल अधिकारों के लागू करने के बारे में विवाद। भारत में कोई अन्य अदालत ऐसे मामलों की सुनवाई नहीं कर सकती। इस प्रकार उच्चतम न्यायालय एक संघीय अदालत है।

फिर भी यह न्यायाधिकार लागू किसी संधि, समझौते आदि से उत्पन्न होने वाले विवाद पर लागू नहीं होता तथा ऐसे न्यायाधिकार क्षेत्र से बाहर ही उच्चतम न्यायालय का न्यायाधिकार क्षेत्र कुछ मामलों जैसे अंतर्राज्यीय जल विवाद (अनुच्छेद 262), वित्त आयोग को प्रेषित मामलों (अनुच्छेद 280) तथा संघ और राज्यों के बीच कुछ खर्चों के समायोजन (अनुच्छेद 290) में लागू किया जा सकता है। राज्य भारत सरकार के विरुद्ध किसी वसूली का दावा नहीं कर सकता (अनुच्छेद 131)। उच्चतम न्यायालय का मूल न्यायाधिकार किसी के मूल

अधिकार के उल्लंघन में भी लागू किया जाता है (अनुच्छेद 32)। अनुच्छेद 139ए के अंतर्गत उच्चतम न्यायालय न्याय के हित में किसी उच्च न्यायालय में स्थानांतरित कर सकता है।

अपीलीय न्यायाधिकारः उच्चतम न्यायालय भारत में सभी न्यायालयों से अपील का उच्चतम न्यायालय है। यह दीवानी, फौज़दारी और संवैधानिक मामलों से संबंधित मामलों की अपीलो की सुनवाई करता है। उच्चतम न्यायालय के अपीलीय न्यायाधिकार को निम्नलिखित तीन भागों में विभाजित किया जा सकता हैः

i) संविधान की व्याख्या से संबंधित मामले – दीवानी, फौज़दारी या अन्य

ii) किसी भी प्रकार के संवैधानिक प्रश्न वाले दीवानी मामले

iii) किसी भी प्रकार के संवैधानिक प्रश्न वाले फौजदारी मामले

यदि कानून के किसी महत्वपूर्ण प्रश्न की आवश्यकता है तो किसी निर्णय, अधिदेश या अंतिम आदेश से विशेष अनुमति के द्वारा उच्चतम न्यायालय अपील स्वीकार करता है। एक उच्च न्यायालय के फौज़दारी मामले में उच्चतम न्यायालय का अपीलीय न्यायाधिकार एक अधिकार के रूप में आता है जहाँ (क) उच्च न्यायालय ने अपील में किसी अभियुक्त के मुक्ति आदेश को रद्द कर उसे मृत्युदंड दिया हो या (ख) उच्च न्यायालय ने उसके समक्ष आए हुए मुकदमे को वापिस लेने की अनुमति दी हो या उच्च न्यायालय ने किसी मामले को अपील के लिए उपयुक्त माना हो।

सलाहकारी न्यायाधिकार

उच्चतम न्यायालय राष्ट्रपति द्वारा विचार किए जाने के लिए उसके सम्मुख प्रस्तुत कानून के किसी प्रश्न पर या जन महत्व के किसी तथ्य पर अपनी सलाह प्रदान करता है। सलाह राष्ट्रपति के लिए बाध्यकारी नहीं होती जो इसे स्वीकार या अस्वीकार कर सकता है। इस प्रावधान का मुख्य उद्देश्य सरकार द्वारा किसी मामले में कार्रवाई करने से पूर्व उसकी कानून उपयुक्तता पर आधिकारिक विचार प्राप्त करना है।

लोगों के प्रतिनिधित्व अधिनियम, एम.आर.टी.पी. अधिनियम, अधिवक्ता अधिनियम, अदालत की अवमानना अधिनियम, तथा राष्ट्रपति व उप-राष्ट्रपति अधिनियम, 1952 के अंतर्गत भी उच्चतम न्यायालय में अपील की जा सकती है।

अन्य अधिकारः उच्चतम न्यायालय को अनेक अन्य अधिकार प्राप्त हैं जो इस प्रकार हैं:

i) अनुच्छेद 129 कहता है कि उच्चतम न्यायालय 'अभिलेख की अदालत' है। उच्चतम न्यायालय के निर्णयों का अभिलेख बनाया जाता है और ये वैसे ही मामलों में मिसाल कायम करते हैं। यदि देश में कोई व्यक्ति, संस्था या संस्थाएँ उच्चतम न्यायालय के निर्णयों के प्रति अवमानना प्रकट करता है तो उस व्यक्ति, संस्था या संस्थाओं के विरुद्ध अदालत की अवमानना कार्रवाई की जा सकती है। इसके पास इसके अधिकार की अवमानना करने वाले दोषी व्यक्ति को जुर्माना या कैद की सजा देने का अधिकार है।

ii) उच्चतम न्यायालय का निर्णय भारत में सभी अदालतों के लिए बाध्यकारी है। फिर भी उच्चतम न्यायालय अपने पहले के किसी निर्णय से बाध्यकारी नहीं है। यदि इसे किसी गलती या जनहित की क्षति का भरोसा हो जाए तो यह भिन्न निर्णय दे सकता है।

iii) उच्चतम न्यायालय द्वारा जारी अधिदेश और आदेश संपूर्ण भारत में लागू किए जाने वाले होते हैं।

iv) उच्चतम न्यायालय राष्ट्रपति के अनुमोदन से अदालत के कार्य और प्रक्रिया के बारे में नियम बना सकता है।

v) उच्चतम न्यायालय संघ लोक सेवा आयोग की सलाह से अपने अधिकारियों एवं कार्मिकों की नियुक्ति कर सकता है तथा राष्ट्रपति की सलाह से उनकी सेवा शर्तें निर्धारित कर सकता है।

vi) उच्चतम न्यायालय राष्ट्रपति और उप-राष्ट्रपति के चुनाव के बारे में विवादों का निपटारा करता है।

vii) उच्चतम न्यायालय संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष एवं सदस्यों को हटाने की सिफारिश राष्ट्रपति को भेज सकता है।

viii) अनुच्छेद 139 एक के अंतर्गत (44वें संशोधन अधिनियम के द्वारा शामिल) उच्चतम न्यायालय कोई कानूनी प्रश्न या कोई महत्वपूर्ण मामला होने पर एक या अनेक उच्च न्यायालयों से मामला अपने यहाँ स्थानान्तरित कर

सकता है। उच्चतम न्यायालय न्याय के हित में किसी मामले को एक उच्च न्यायालय से दूसरे उच्च न्यायालय में स्थानान्तरित कर सकता है।

न्यायिक पुनरीक्षण

न्यायिक पुनरीक्षण उच्चतम न्यायालय की संविधान परिप्रेक्ष्य में किसी कानून की वैधता का निर्णय करने का अधिकार है। यदि कोई कानून असंवैधानिक है तो उच्चतम न्यायालय उसे निरस्त कर सकता है। यह संयुक्त राज्य अमेरिका की परम्परा का अनुसरण है। देश का मूल कानून होने के कारण संविधान का सम्मान करना आवश्यक है और न्यायिक व्याख्या का ध्यान करते हुए तथा कानून को अनुमत्य बनाने के लिए संविधान में संशोधन किया जा सकता है।

मूल अधिकारों की रक्षा

उच्चतम न्यायालय लोगों के मूल अधिकारों की सुरक्षा को जिम्मेदारी वहन करता है। किसी भी व्यक्ति, संस्था या संगठन द्वारा किसी व्यक्ति के मूल अधिकारों का उल्लंघन किए जाने पर वह उच्चतम न्यायालय जा सकता है। उच्चतम न्यायालय बन्दी प्रत्यक्षीकरण याचिका, परमादेश, निषेधाज्ञा, अधिकार पृच्छा तथा कार्रवाई रिकार्ड मँगाने के द्वारा इन अधिकारों को लागू कर सकता है।

उच्च न्यायालय

राज्य स्तर पर संविधान उच्च न्यायालय की स्थापना करता है जो राज्य में न्यायिक प्रशासन का उच्चतम न्यायालय है। वर्तमान में भारत में छत्तीसगढ़, झारखंड तथा उत्तरांचल में प्रत्येक नए राज्यों के लिए अलग-अलग उच्च न्यायालय की स्थापना की। औपचारिकताएँ पूरी होने के बाद 21 उच्च न्यायालय हैं। संविधान के अनुच्छेद 214 के अनुसार, प्रत्येक राज्य में एक उच्च न्यायालय होगा लेकिन अनुच्छेद 231 संसद को दो या अधिक राज्यों के लिए एक ही कॉमन उच्च न्यायालय की स्थापना का अधिकार प्रदान करता है। संसद कानून के द्वारा संघशासित प्रदेश के लिए एक उच्च न्यायालय की स्थापना कर सकती है या ऐसे किसी प्रदेश में किसी न्यायालय को उच्च न्यायालय घोषित कर सकती है। (अदालत 241) दिल्ली का अलग उच्च न्यायालय है लेकिन अन्य संघ शासित प्रदेश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के न्यायाधिकार क्षेत्र में आते हैं।

उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति

प्रत्येक उच्च न्यायालय में एक मुख्य न्यायाधीश तथा समय-समय पर राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त अन्य न्यायाधीश होते हैं। सभी उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की संख्या एक समान नहीं होती। उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति भारत के मुख्य न्यायाधीश तथा संबंधित राज्य के राज्यपाल की सलाह से राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति में राष्ट्रपति उस उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की सलाह से करता है। इसके अतिरिक्त राष्ट्रपति को सीमित अवधि के लिए अतिरिक्त न्यायाधीश या स्थाई न्यायाधीशों की अनुपस्थिति में कार्यकारी न्यायाधीशों की नियुक्ति करने का भी अधिकार है।

योग्यताः उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की नियुक्ति के लिए व्यक्ति को (क) भारत का नागरिक होना चाहिए जिसकी आयु 62 वर्ष से अधिक न हो, या (ख) उसके पास कम से कम 10 वर्ष तक न्यायिक पद पर रहने का अनुभव हो, या, (ग) वह कम से कम 10 वर्ष तक उच्च न्यायालय का या ऐसी दो अथवा अधिक न्यायालयों का क्रमिक रूप से अधिवक्ता रहा हो (अनुच्छेद 217(2))।

पद की अवधिः उच्च न्यायालय के न्यायाधीश 62 वर्ष की आयु तक अपने पद पर बने रहते हैं। इससे पूर्व वे लिखित रूप से अपने पद से त्यागपत्र राष्ट्रपति को भेज सकते हैं। संसद के दोनों सदनों द्वारा प्रत्येक सदन में उपस्थिति तथा मतदान में भाग लेने वाले दो-तिहाई सदस्यों के बहुमत द्वारा उच्च न्यायालय के किसी न्यायाधीश के दुर्व्यवहार अथवा अक्षमता सिद्ध करने के आधार पर राष्ट्रपति द्वारा उसे अपने पद से हटाया जा सकता है। उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को हटाने का तरीका उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश को हटाने जैसा ही है। राष्ट्रपति द्वारा उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त करने अथवा उसे किसी अन्य उच्च न्यायालय में स्थानांतरित करने के कारण भी उसका पद रिक्त हो जाता है।

वेतनः उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश को 30,000/- रुपये तथा न्यायाधीश को 26,000/- रुपये प्रतिमाह वेतन मिलता है। इसके अतिरिक्त उसे संसद द्वारा समय-समय पर निर्धारित पेंशन एवं भत्ते आदि भी प्राप्त होते हैं लेकिन ये भत्ते व अधिकार संसद द्वारा उसकी नियुक्ति के बाद कम नहीं किए जा सकते हैं (अनुच्छेद 221)।

न्यायाधीशों की स्वतंत्रताः निम्नलिखित प्रावधान उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की स्वतंत्रता को बनाए रखते हैं:

i) यह वर्णन करके कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को दुर्व्यवहार व अक्षमता सिद्ध करने के आधार पर उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश को हटाने के तरीके के अलावा किसी अन्य तरीके से नहीं हटाया जाएगा।

ii) न्यायाधीशों के वेतन एवं भत्ते राज्य की समेकित निधि से खर्च करने के द्वारा तथा यह विनिर्दिष्ट करके कि न्यायाधीश की नियुक्ति के बाद संसद द्वारा उसके वेतन आदि में कटौती नहीं की जाएगी (वित्तीय आपदा घोषित करने को छोड़कर)।

iii) यह वर्णन करके कि उच्च न्यायालय का स्थाई न्यायाधीश सेवा निवृत्त होने के बाद भारत में उच्चतम न्यायालय या अपने धारित पद वाले उच्च न्यायालय को छोड़कर अन्य किसी अन्य न्यायालय के अतिरिक्त कहीं भी वकालत या कार्य नहीं करेगा (अनुच्छेद 220)।

संघ का नियंत्रणः उच्च न्यायालयों को प्रांतीय राजनीति से बाहर रखने के लिए कुछ मामलों में उच्च न्यायालयों को संघ के नियंत्रण में रखा गया है। अनुच्छेद 222 के अनुसार राष्ट्रपति भारत के मुख्य न्यायाधीश से सलाह करके न्यायाधीश को एक उच्च न्यायालय से दूसरे उच्च न्यायालय में स्थानांतरित कर सकता है। उच्चतम न्यायालय ने उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों को स्थानांतरित करने का अधिकार अपने पास रखा है लेकिन यदि स्थानांतरण भारत के मुख्य न्यायाधीश की सलाह के विरुद्ध है तो संबंधित न्यायाधीश अनुच्छेद 226 के अनुसार स्थानांतरण को चुनौती देने वाली याचिका दायर कर सकता है।

उच्च न्यायालय का न्यायाधिकार एवं कार्य

संविधान में उच्च न्यायालयों के सामान्य न्यायाधिकार से संबंधित विस्तृत प्रावधान वर्णित नहीं है क्योंकि ये संविधान निर्माण से पूर्व विद्यमान थे और पूरी तरह स्पष्ट रूप से न्यायाधिकार थे। प्रत्येक उच्च न्यायालय अपने क्षेत्राधिकार में आने वाले सभी न्यायालयों और ट्रिब्यूनलों पर (सशस्त्र सेनाओं से संबंधित कानून के द्वारा अपवादों को छोड़कर) निरीक्षण अधिकार रखता है। उच्च न्यायालय यह सुनिश्चित

करने के लिए कदम उठा सकता है कि निचली अदालतें अपने अधिकारों के अंदर ही अपने कर्त्तव्यों को पूरा करें। यह अधीनस्थ अदालत में लम्बित पड़े किसी ऐसे मामले को अपने यहाँ स्थानांतरित कर सकता है जिसने संविधान की व्याख्या करने जैसे कानून का कोई महत्वपूर्ण प्रश्न हो। यह कानून से उक्त प्रश्न का स्वयं निर्णय या निर्धारण कर सकता है तथा फिर फैसले के लिए वापिस उस अदालत को लौटा सकता है।

उच्च न्यायालय किसी मामले को निपटाने के लिए उसे एक निचली अदालत से दूसरी निचली अदालत में स्थानांतरित कर सकता है। प्रत्येक उच्च न्यायालय रिकार्ड न्यायालय होता है तथा अपनी अवमानना के लिए दंडित करने के अधिकार सहित न्यायालय के सभी अधिकारों से संपन्न होता है। यह राज्य में दीवानी और फौजदारी दोनों ही मामलों में उच्चतम अपीलीय न्यायालय है। यह वैवाहिक मामलों और मावधिकरण (admirally) से संबंधित मामलों की सुनवाई करता है। मामलों की विशिष्ट श्रेणियों की सुनवाई करने का उच्च न्यायालय के न्यायाधीश का न्यायाधिकार मुख्य न्यायाधीश द्वारा कार्य के उपयोग के आदेश ही प्राप्त होता है।

उच्च न्यायालय मूल अधिकारों को लागू करने के लिए आदेश ज़ारी कर सकता है। इसके अतिरिक्त अनुच्छेद 226 के अंतर्गत यह ऐसे मामलों में भी आदेश जारी कर सकता है जिनमें साधारण कानूनी अधिकार का उल्लंघन हुआ है और ऐसे मामलों में आदेश जारी करना ही उपयुक्त उपाय है। इस अर्थ में उच्च न्यायालय द्वारा आदेश जारी करने का अधिकार उच्चतम न्यायालय से भी व्यापक है जिसका केवल मूल अधिकारों को लागू करने के ही आदेश जारी करने का न्यायाधिकार है। यह अन्य किसी भी उद्देश्य के लिए उन सभी मामलों पर भी लागू होता है जहाँ किसी कानूनी अधिकार का उल्लंघन हुआ है। मूल अधिकारों को लागू करने के अधिकारों का दायरा रक्षात्मक और उपायकारी दोनों प्रकार का हो। यह न्यायाधिकार की चूकों (गलतियों), प्राकृतिक न्याय के नियमों की अनदेखी, रिकार्ड में प्रकट होने वाली कानून की भूल तथा वैकल्पिक उपाय के लिए भी आदेश जारी कर सकता है।

जिला न्यायाधीशों की नियुक्ति, तैनाती और पदोन्नति में राज्यपाल उच्च न्यायालय की सलाह पर करता है। राज्य की विधि सेवा में व्यक्तियों की नियुक्तियों में

राज्यपाल द्वारा राज्य लोक सेवा आयोग के साथ उच्च न्यायालय से भी सलाह की जाती है। जिला अदालतों तथा अन्य अधीनस्थ अदालतों के ऊपर नियंत्रण का अधिकार उच्च न्यायालयों के पास होता है।

भारतीय कानून प्रणाली तथा उपेक्षित समूह के लिए इसकी सार्थकता

भारतीय कानून प्रणाली काफी प्रसिद्ध, संरक्षी तथा संवेदनशील है। यह (i) संवैधानिक सुरक्षा के लिए कार्य करती है। (ii) कानून संसद द्वारा पारित किए जाते हैं, और (iii) न्यायिक निर्णय के लिए कार्य करती है।

भारत विश्व में दूसरा सबसे बड़ी जनसंख्या वाला देश तथा विदेशी शासन द्वारा शोषित होने के कारण इसकी अनेक समस्याएँ हैं। भारत में कुछ ज्वलंत समस्याएँ हैं गरीबी एवं अशिक्षा। हमारी वर्तमान सामाजिक राजनीतिक व्यवस्था में अनेक समूह सुभेद्य, निर्बल और अपने अधिकारों से वंचित रहते हैं तथा विकास प्रक्रिया के हाशिये पर हैं। पिछले पचास वर्षों में हमने विभिन्न साधनों से हमने उपेक्षित समूहों के हितों की रक्षा करने और उन्हें बढ़ावा देने के सजग प्रयास किए हैं। इसकी शुरुआत हमारे संविधान में निहित मूल अधिकारों तथा राज्य की नीति के निर्देशिक सिद्धान्तों की प्रतिबद्धता के माध्यम से की गई ताकि एक समतावादी, शोषणमुक्त और रचनात्मक वातावरण बनाया जा सके। हमने महिलाओं, बच्चों, दलितों आदि उपेक्षित वर्गों के हितों की सुरक्षा और उन्हें बढ़ावा देने के लिए अनेक सामाजिक कानून बनाए हैं। सामाजिक कानूनों का एक समूह स्वरूप में प्रगतिगामी तथा संरक्षा है तो दूसरा समूह अपने उद्देश्य में कुरीतियों के विरुद्ध निषेधात्मक है।

महिलाओं को सशक्त बनाने तथा उनकी सुरक्षा के संवैधानिक और कानूनी प्रावधानः हमारे संविधान का समानता में दृढ़ विश्वास है। महिला समानता के लिए चुनौतियाँ, पितृ समाज व्यवस्था, सामाजिक मनोवृत्ति और परम्पराओं के कारण है। भारतीय महिलाओं को चुनौती देने वाली समस्याएँ हैं निरंतर भेदभाव, शोषण, अल्प आर्थिक स्थिति, राजनीतिक भागीदारी का अभाव, अशिक्षा, तथा निर्धनता आदि। महिलाओं के साथ विभिन्न प्रकार के अपराध किए जाते हैं जैसे कन्या भ्रूण हत्या, दहेज हत्या, बलात्कार, घरेलू हिंसा, लैंगिक शोषण आदि।

हमारे संविधान में निम्नलिखित के माध्यम से उनकी स्थिति में सुधार के लिए विशेष प्रावधान किए गए हैं:

अनुच्छेद 14 कानून के समक्ष समान संरक्षण तथा प्रत्येक नागरिक को समान अवसर प्रदान करता है और इस प्रकार केवल लिंग के आधार पर कोई अयोग्यता या अक्षमता नहीं होगी।

अनुच्छेद 15 राज्य को धर्म, जाति, नस्ल, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव करने से प्रतिबंध करता है।

अनुच्छेद 15(3) विशेष प्रावधान के द्वारा राज्य को महिलाओं के पक्ष में सकारात्मक भेद करने का अधिकार प्रदान करता है।

अनुच्छेद 16 सार्वजनिक रोज़गार में समान अवसर प्रदान करता है।

अनुच्छेद 19(1)(ग) सभी नागरिकों को संघ (एसोसिएशन) बनाने का अधिकार देता है।

अनुच्छेद 23 महिला और बंधुआ मज़दूर जैसे वेश्या सहित मनुष्यों के किसी भी रूप में व्यापार को निषेध करता है।

अनुच्छेद 39 (क) राज्य को ऐसी नीति बनाने का निर्देश देता है जिसके अंतर्गत सभी नागरिक पुरुष और महिलाएँ समान रूप से जीवन यापन के पर्याप्त साधनों का अधिकार रखते हों।

अनुच्छेद 39 (घ) पुरुषों और महिलाओं को समान कार्य के लिए समान वेतन सुनिश्चित करता है।

अनुच्छेद 39 (ङ) श्रमिकों, पुरुषों और महिलाओं का स्वास्थ्य तथा शक्ति का दुरुपयोग नहीं किया जाएगा।

अनुच्छेद 42 राज्य को निर्देश देता है कि प्रसूति सहायता सुरक्षित करे।

अनुच्छेद 51 क(ग) के द्वारा राज्य पर महिलाओं के सम्मान को विकृत करने वाली परम्पराओं को त्यागने का मूल दायित्व डाला गया है।

अनुच्छेद 243 घ-2 महिलाओं को प्रत्येक पंचायत और नगरपालिका में उनके लिए आरक्षित क्षेत्र पर चुनाव लड़ने का अधिकार प्रदान करता है।

अनुच्छेद 325 प्रत्येक प्रादेशिक क्षेत्र के लिए एक सामान्य मतदाता सूची बनाने का प्रावधान करता है और इस सूची में शामिल करने के लिए किसी व्यक्ति को अयोग्य नहीं माना जाएगा।

अनुच्छेद 326 प्रत्येक नागरिक जिसकी आयु 18 वर्ष से कम नहीं है चाहे वह पुरुष हो या महिला को मतदान का अधिकार प्रदान करता है।

फिर महिलाओं के विरुद्ध हिंसा को रोकने के लिए आपराधिक कानून संशोधन अधिनियम 1983 में पारित किया गया। भारतीय दंड सहिता (Indian Panel Code – IPC) के अंतर्गत पहचान किए गए अपराध निम्नलिखित हैं:

i) बलात्कार (खण्ड 376, आई पी सी)

ii) विभिन्न कार्यों के लिए भगा ले जाना और अपहरण करना (खण्ड 363, 373 आई पी सी)

iii) दहेज के लिए हत्या, दहेज हत्या या अन्य प्रयास (खण्ड 302/304-ख, आई पी सी)

iv) शारीरिक और मानसिक उत्पीड़न (खण्ड 498-क, आई पी सी)

v) छेड़छाड़ (खण्ड 354, आई पी सी)

vi) लैंगिक उत्पीड़न (खण्ड 509, आई पी सी)

vii) लड़कियों का आयात करना (21 वर्ष तक की आयु) (खण्ड 366, आई पी सी)

आदिवासियों या जनजातियों की सुरक्षा के संवैधानिक उपाय

विश्व में भारत में सर्वाधिक जनजातीय आबादी है। दुर्भाग्य से अनेक शताब्दियों से उनका उत्पीड़न, उनके साथ पक्षपात और शोषण किया जा रहा है। उन्हें तत्कालीन ताकतों के द्वारा अपनी जमीन, संसाधनों और संस्कृति से वंचित किया गया है। उनमें अत्यधिक अशिक्षा और स्वास्थ्य समस्याएँ हैं। इसलिए भारतीय संविधान ने उन्हें विशेष संरक्षण प्रदान किया है। उन्हें प्रदान किए गए कुछ विशेष अधिकार निम्नलिखित हैः

अनुच्छेद 19(5) किसी भी अनुसूचित जाति के हित में कानून के द्वारा सभी नागरिकों के मुक्त होकर भ्रमण करने, स्थापित होने तथा संपत्ति ग्रहण करने के सामान्य कानून को सीमित किया गया है।

अनुच्छेद 164, 338 तथा पाँचवी अनुसूची: जनजातियों के कल्याण हेतु राज्यों में जनजातीय सलाहकार परिषदें (Tribal Advisory Councils – TACs) और अलग विभाग स्थापित करने का अधिकार प्रदान करती है। राज्य की जनजातीय सलाहकार परिषद में 20 से अधिक सदस्य नहीं होंगे जिनमें से लगभग तीन-चौथाई सदस्य राज्य विधान मंडलों में अनुसूचित जनजातियों के प्रतिनिधि होंगे।

अनुच्छेद 244 तथा पाँचवी और छठी अनुसूची: विशेष प्रावधान करती है ताकि अनुसूचित जनजाति क्षेत्रों का प्रशासन और नियंत्रण किया जा सके।

उपर्युक्त संवैधानिक आश्वासनों के अतिरिक्त नागरिक अधिकार सुरक्षा अधिनियम, 1976 जैसे कानूनी उपाय भी किए गए हैं जिन्हें उनकी स्वतंत्रता, सम्मान, अधिकार सुनिश्चित करने तथा उन्हें शोषण और भेदभाव से बचाने के लिए पारित किया गया है।

दलितों की सुरक्षा के लिए विशिष्ट संवैधानिक प्रावधान

दलित शब्द का अर्थ है 'शोषित', 'जर्ज़र' 'पद दलित'। दलित जाति प्रथा से परे हैं। इन्हें अस्पृश्य (अछूत) के रूप में भी जाना जाता है। संविधान में इन्हें अनुसूचित जातियाँ (अर्थात राज्य द्वारा पृथक संरक्षण की आवश्यकता वाली जातियाँ) कहा गया है। लेकिन दलित उन अछूतों का नाम है जो उन्होंने स्वयं अपने लिए चुना है क्योंकि वे ऐसा अनुभव करते हैं और यह उनकी सही पहचान का वर्णन करता है। दलितों के विरुद्ध भेदभाव आज भारत में सामाजिक अन्याय का एक सर्वाधिक सामान्य स्वरूप है। जाति प्रथा सरकारी रूप से प्रतिबंधित होने के बावजूद यह आज भी उसी तरह प्रचलित है जैसे संविधान लागू करने के समय थी। दलितों के कल्याण हेतु प्रतिबद्ध संविधान के अनेक अनुच्छेद निम्नलिखित हैं:

अनुच्छेद 14 समता का अधिकार निरूपित करता है।

अनुच्छेद 15(1) धर्म, नस्ल, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर भेद को निषेध करता है।

अनुच्छेद 15(2) दुकानों, सार्वजनिक रेस्त्राओं, भोजनालयों तथा लोक मनोरंजन के स्थानो पर जाने, कुंओं, तालाबों, स्नानघाटों, सड़कों तथा राज्य निधि से पूर्णतः या आंशिक रूप से देखभाल किए जाने वाले सार्वजनिक सैरगाहों या आम जनता के उपयोग को समर्पित स्थानों के उपयोग में अक्षमता, दायित्व, प्रतिबंध या शर्तों को हटाने की सिफारिश करता है।

अनुच्छेद 15(4) निरूपित करता है कि राज्य किसी सामाजिक या शैक्षिक रूप से पिछड़े नागरिकों के किसी वर्ग या अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की प्रगति के लिए विशेष प्रावधान बना सकती है।

अनुच्छेद 16(4) निरूपित करता है कि राज्य अपने विचार में समझे जाने वाले नागरिकों के किसी पिछड़े वर्ग के लिए नियुक्तियों या पदों के आरक्षण का प्रावधान कर सकता है जिसके बारे में राज्य समझता है कि राज्य की सेवा में उनका प्रतिनिधित्व पर्याप्त नहीं है।

अनुच्छेद 17 किसी भी रूप में अस्पृश्यता के व्यवहार को निषेध करता है।

अनुच्छेद 46 समुदाय के कमज़ोर वर्गों और विशेषतः अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की विशेष प्रयासों से शैक्षिक और आर्थिक हितों को बढ़ावा देने के लिए राज्य को निर्देश देता है क्योंकि इन्हें सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से बचाने की आवश्यकता है।

अनुच्छेद 330, 331, 332, 333 और 334 लोकसभा तथा राज्यों की विधानसभाओं में अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों तथा एंग्लो इंडियन समुदायों के प्रतिनिधियों के लिए पदों का आरक्षण प्रदान करता है।

अनुच्छेद 164, 338 तथा पाँचवी अनुसूची: अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के कल्याण की देखभाल के लिए राष्ट्रीय आयोग, जनजातीय परिषदें तथा राज्य में अलग विभागों तथा केन्द्र में विशेष अधिकारी की स्थापना का अधिकार प्रदान करता है।

अनुच्छेद 335 निरूपित करता है कि संघ या राज्य के कार्यों में पदों और सेवाओं के संदर्भ में नियुक्तियाँ करते समय अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के दावों पर विचार किया जाएगा।

अनुच्छेद 340 सरकार को एक ऐसा आयोग बनाने में सक्षम बनाता है जो सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों की स्थितियों की जाँच करेगा।

बच्चों से संबंधित संवैधानिक प्रावधान

बच्चे एक और ऐसा वर्ग है जिनका शोषण और उत्पीड़न किया जाता है तथा मूल मानवाधिकारों और संभावित बचपन से वंचित रखा जाता है। निम्नलिखित संवैधानिक प्रावधानों के द्वारा विधि प्रणाली उनकी समस्याओं को दूर करने का प्रयास करती है।

अनुच्छेद 23 वर्णन करता है कि मानवों का अवैध व्यवसाय एवं भिक्षावृत्ति तथा बलात् श्रम के ऐसे ही स्वरूप निषेधित हैं तथा इन प्रावधानों का उल्लंघन कानून के अनुसार दंडनीय अपराध है।

अनुच्छेद 24 कारखानों आदि में बच्चों से कार्य करवाने को निषेध करता है। यह निरूपित करता है कि 14 वर्ष की आयु से कम किसी भी बच्चे को किसी कारखाने या खदान में रोज़गार नहीं दिया जाएगा या किसी जोखिम वाले रोज़गार में नहीं लगाया जाएगा।

अनुच्छेद 39 (ङ) के अनुसार बच्चों की कम आयु का शोषण नहीं करना चाहिए तथा उनकी आर्थिक विवशताओं के कारण उन्हें उनकी आयु और शक्ति के अनुपयुक्त व्यवसायों में शामिल नहीं करना चाहिए।

अनुच्छेद 39 (च) के अनुसार बच्चों को स्वस्थ तरीके से स्वतंत्र और सम्मान के वातावरण में बड़ा होने के अवसर और सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिए तथा बचपन और युवावस्था को शोषण, तथा मनोवैज्ञानिक एवं शारीरिक वशीकरण के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान की जाए।

अनुच्छेद 45 के अनुसार राज्य 14 वर्ष की आयु पूरी होने तक सभी बच्चों को संविधान आरंभ होने की तिथि से कुछ ही वर्षों में मुफ़्त और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने का प्रयास करेगा।

चूँकि हमारा संविधान बच्चों के अधिकारों की रक्षा करने और उन्हें बढ़ावा देने के लिए प्रतिबद्ध है। अतः उनके बचपन की सुरक्षा के लिए अनेक कानून बनाए गए

हैं। कानूनी सुरक्षा प्रदान करने के लिए वर्षवार किए गए प्रयासों के बारे में चर्चा आगे की जा रही है:

1948 औद्योगिक अधिनियम, 1948 के द्वारा उद्योगों में रोज़गार के लिए न्यूनतम आयु सीमा को बढ़ाकर 14 वर्ष की गई। इस प्रकार यह निरूपित करता है कि बच्चों को कारखाने में रोज़गार नहीं दिया जाएगा।

1949 बाल रोज़गार (संशोधन) अधिनियम 1949 भी 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों के अधिनियम में शामिल संस्थाओं में रोज़गार को प्रतिबंधित करता है।

1951 बाल रोज़गार (संशोधन) अधिनियम 1951 (बच्चों के द्वारा रात्रि रोज़गार से संबंधित विश्व श्रम संगठन (World Labour Organisation – WLO) सम्मेलन के परिणामस्वरूप), 15 से 17 वर्ष की आयु के बच्चों द्वारा रेलों और बंदरगाहों में रात्रि में रोज़गार का निषेध करता है तथा 17 वर्ष से कम आयु के बच्चों का रजिस्टर रखने की आवश्यकता निर्धारित करता है।

1951 बागान श्रम अधिनियम, 1951, 12 वर्ष से कम आयु के बच्चों के बागानों में रोज़गार को निषेधित करता है।

1952 खदान अधिनियम, 1952, 15 वर्ष से कम आयु के बच्चों को खदानों में रोज़गार देने पर प्रतिबंध लगाता है। अधिनियम भूमि के नीचे कार्य के लिए दो शर्तें निरूपित करता है।

i) 16 वर्ष की आयु पूरी करने की आवश्यकता।

ii) किसी चिकित्सीय अधिकारी/शल्य चिकित्सक से शारीरिक स्वस्थता प्रमाण-पत्र प्राप्त करने की आवश्यकता।

1958 मर्चेंट शिपिंग (व्यावसायिक नौवहन) अधिनियम, 1958, 15 वर्ष से कम आयु के बच्चों के कुछ विशिष्ट मामलों को छोड़कर किसी भी हैसियत में कार्य करने को निषेधित करता है।

1961 वाहन परिवहन श्रमिक (मोटर ट्रांसपोर्ट वर्कर्स) अधिनियम, 1961, 15 वर्ष से कम आयु के बच्चों के मोटर ट्रांसपोर्ट संस्था में रोज़गार को निषेधित करता है।

1966 बीड़ी और सिगार श्रमिक (रोज़गार दशाएँ) अधिनियम, 1966 में निम्नलिखित को निषेध करता हैः

i) बीड़ी और सिगार बनाने वाले औद्योगिक परिसर में 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को रोज़गार प्रदान करना।

ii) 14 से 18 वर्ष की आयु के व्यक्तियों द्वारा सांय 7 बजे से लेकर प्रातः 6 बजे तक कार्य करना।

1978 बाल रोज़गार (संशोधन) अधिनियम 1978, 15 वर्ष से कम आयु के बच्चों के रेलवे परिसरों में कार्य जैसे अंगार उठाना, राख के गड्ढे की सफाई करना या गड्ढे बनाना, भोजन प्रबंधन संस्थाओं (पाठक शालाओं में कार्य करने तथा रेलवे लाइनों पर या उनके सनिकट किए जाने वाले कार्यों में किसी अन्य कार्य में रोज़गार को निषेधित करता है।

1986 बाल श्रम (निषेध एवं विनिमय) अधिनियम, 1986, यह अधिनियम 14 वर्ष की आयु पूरी न करने वाले बच्चो के अधिनियम की अनुसूची के अनुच्छेद ए और बी में अधिसूचित सात कार्यों का अठारह संसाधन प्रक्रियाओं में रोज़गार को निषेधित करता है।

1986 बाल न्याय अधिनियम 1986 अपराधी और उपेक्षित बच्चों की देखभाल करने के लिए लड़कों की 16 वर्ष तक तथा लड़कियों की 18 वर्ष तक की आयु को मान्यता प्रदान करता है।

2000 बाल न्याय अधिनियम, 2000 (Juvenile Justice Act 2000)

सारांश

हमारा संविधान एकल संघटित न्यायालयों की व्यवस्था करता है। जिसका प्रमुख उच्चतम न्यायालय है इसके नीचे उच्च न्यायालय तथा अन्य अधीनस्थ न्यायालय आते हैं जिसमें शामिल हैं पंचायत अदालतें, मुंसिफ अदालतें, स्थानीय लघु कारण अदालतें तथा मजिस्ट्रेट की अदालतें, प्रशासनिक ट्रिब्यूनल तथा परिवार अदालतें आदि। न्याय प्रणाली में निःशुल्क कानूनी सहायता, लोक अदालत तथा जनहित मुकदमों का भी प्रावधान किया गया है।

समग्र न्याय प्रणाली के शीर्ष पर उच्चतम न्यायालय है जो भारत के संविधान का अभिभावक एवं सरंक्षक है। उच्चतम न्यायालय का प्रमुख भारत का मुख्य न्यायाधीश होता है और इसके 25 अन्य न्यायाधीश होते हैं। भारत के राष्ट्रपति मुख्य न्यायाधीश की सलाह से अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति करता है। निम्नलिखित शर्तों के आधार पर कोई भी व्यक्ति उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त हो सकता हैः (i) भारत का नागरिक होना चाहिए, (ii) कम से कम 5 वर्ष तक उच्च न्यायालय का न्यायाधीश रहा हो या (iii) 10 वर्ष तक उच्च न्यायालय का अधिवक्ता रहने, या (iv) राष्ट्रपति के विचार में विशिष्ट न्यायविद रहा हो। उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश 65 वर्ष की आयु तक अपने पद पर रह सकता है तथा संसद के दोनों सदनों द्वारा (कुल सदस्यों के बहुमत और उपस्थित तथा मतदान करने वाले 2/3 सदस्यों के समर्थन द्वारा) राष्ट्रपति के कहने के द्वारा उसे हटाया जा सकता है। उच्चतम न्यायालय का न्यायाधिकार तथा शक्तियाँ काफी व्यापक हैं। इसके तीन प्रकार के कार्य हैंः (क) मूल न्यायिक कार्य, (ख) अपीलीय न्यायाधिकार, (ग) सलाहकारी कार्य। कानून या कानूनी तथ्य वाले लोकहित मामलों में राष्ट्रपति उच्चतम न्यायालय से सलाह करता है। उच्चतम न्यायालय अभिलेख न्यायालय है। इसके महत्वपूर्ण कार्यों में एक कार्य न्यायिक समीक्षा भी है। यदि कोई कानून संवैधानिक है तो उच्चतम न्यायालय उसे निरस्त कर सकता है। उच्चतम न्यायालय मूल अधिकारों का संरक्षक भी है तथा यह न्यायिक अध्यादेश जारी कर मौलिक अधिकारों को लागू करता है।

उच्च न्यायालयः उच्च न्यायालय राज्य स्तर पर सर्वोच्च अपीलीय न्यायालय है। उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश राष्ट्रपति द्वारा भारत के मुख्य न्यायाधीश तथा संबंधित राज्य के राज्यपाल की सलाह से नियुक्त किया जाता है। अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की सलाह से की जाती है।

उच्च न्यायालय के न्यायाधीशः क) भारत का नागरिक होना चाहिए, ख) कम से कम 10 वर्ष तक न्यायिक पद धारण करने वाला हो, तथा ग) उच्च न्यायालयों या अन्य न्यायालयों में कम से कम 10 वर्ष तक अधिवक्ता रहा हो। वे 62 वर्ष की आयु तक अपने पद पर रहते हैं। उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश की तरह उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को दुर्व्यवहार या अक्षमता सिद्ध होने के आधार पर संसद के दोनों सदनों द्वारा प्रत्येक सदन में उपस्थित और मतदान करने वाले दो-

तिहाई सदस्यों के समर्थन से राष्ट्रपति के अनुमोदन द्वारा उसके पद से हटाया जा सकता है। पेंशन और भत्तों आदि के साथ मुख्य न्यायाधीश को 30,000 रुपये तथा अन्य न्यायाधीशों को 26,000/- रुपये प्रतिमाह वेतन मिलता है। उच्च न्यायालय के निम्नलिखित अधिकार और कार्य होते हैं: (i) अपने न्यायाधिकार में आने वाले सभी न्यायालयों एवं ट्रिब्यूनलों का पर्यवेक्षण करना, (ii) अधीनस्थ कार्यालयों द्वारा अपने कर्त्तव्यों का निर्वाह सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाना, (iii) अधीनस्थ न्यायालय में लंबित मामलों को निपटाना, (iv) मूल अधिकार लागू करने के लिए न्यायाधिदेश जारी करना।

भारतीय कानून प्रणाली अत्यधिक संगठित है और अनेक अधिकारों से संपन्न विभिन्न कार्यों का निर्वाह करती है। संविधान का अभिभावक एवं संरक्षक होने के नाते इसके पास देश के उपेक्षित वर्गों जैसे महिलाएँ, बच्चे, जनजातियों और दलितों को सशक्त बनाने के उसके क्षेत्राधिकार में विशेष आश्वासन और अधिकार हैं। यह कानून प्रणाली को एकदम सार्थक बना देता है जो कि एक लोकतांत्रिक देश में आवश्यक भी है।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

बासु, दुर्गादास, *इन्ट्रोडक्शन टु द कॉन्स्टीट्यूशन ऑफ इंडिया*

एम. वी. पिल्लै, (2003) *डियाज़ कॉन्स्टीट्यूशन*, एस चाँद एंड कं., नई दिल्ली

कश्यप सुभाष सी, (2003) *आवर कॉन्स्टीट्यूशन*, नेशनल बुक ट्रस्ट ऑफ इंडिया